(1)

~~अध्याय 18~~

Dr. Nishat Jhan
1/05/20

न्यायिक पूर्व-निर्णय
(Judicial Precedents)

LL.B VI sem
legal language.

विधि के स्रोत के रूप में न्यायिक पूर्व-निर्णयों का पर्याप्त महत्व है। पूर्व-निर्णय से आशय किसी ऐसे सुनिश्चित प्रतिमान (set pattern) से है जिसके आधार पर लोग अपना भावी आचरण आधारित कर सकें। विधि के सन्दर्भ में पूर्व-निर्णय का अर्थ है "भूतकालीन निर्णयों को मार्गदर्शक के रूप में अपनाते हुए भावी निर्णयों के प्रति लागू करना।"[1] बेबीलोनिया में 2000 ई० पू० भी न्यायालयीन निर्णयों को अभिलिखित किये जाने की परिपाटी प्रचलित थी ताकि कानूनी परामर्श के लिए इनकी सहायता ली जा सके।[2] रोमन विधिशास्त्र के अन्तर्गत न्यायाधीशों को यह निर्देश दिया गया था कि वे समान प्रकरणों में विख्यात न्यायवेत्ताओं द्वारा दिये गये पूर्व-निर्णयों का अनुसरण करें। उल्लेखनीय है कि महाद्वीपीय पद्धति में पूर्व-निर्णयों को बन्धनकारी नहीं माना गया है तथा न्यायाधीशों को यह विवेकाधिकार प्राप्त है कि वे अपने निर्णय को पूर्व-दृष्टान्त पर आधारित करें या न करें। परन्तु इंग्लिश विधि में कुछ दशाओं में पूर्व-निर्णय बन्धनकारी प्रभाव रखते हैं, अर्थात् न्यायाधीशों को समान प्रकरणों वाले वादों में पूर्व-निर्णयों का अनुसरण करना अनिवार्य होता है।

पूर्व-निर्णय का अर्थ (Meaning of Precedent)

सामण्ड (Salmond) के अनुसार न्यायिक पूर्व-निर्णय न्यायालय द्वारा दिया गया ऐसा निर्णय है जिसमें विधि का कोई सिद्धान्त निहित होता है। पूर्व-निर्णय में निहित सिद्धान्त जो उसे प्राधिकारिक तत्व प्रदान करता है, विधिशास्त्रीय भाषा में 'विनिश्चय-आधार' (*Ratio decidendi*) कहलाता है। ऐसे ठोस निर्णय सम्बन्धित पक्षकारों पर बन्धनकारी प्रभाव रखते हैं तथा इन निर्णयों के आधार को विधि के रूप में स्वीकार किया जाता है। दूसरे शब्दों में, न्यायिक पूर्व-निर्णय न्यायालय द्वारा निर्धारित ऐसे सिद्धान्त होते हैं जो भविष्य में न्यायालय के समक्ष निर्णय हेतु आने वाले समान वादों में लागू किये जाते हैं। उल्लेखनीय है कि सभी न्यायिक निर्णय पूर्व-निर्णय[3] का रूप धारण नहीं करते बल्कि केवल ऐसे निर्णय ही पूर्वोक्ति का महत्व रखते हैं जो किसी नये नियम या विधि-सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हों।

प्रोफेसर गुडहार्ट ने सामंड के निर्णयाधार के सिद्धांत की आलोचना करते हुए लिखा है कि वस्तुतः न्यायालय द्वारा प्रतिपादित प्रत्येक सिद्धान्त विनिश्चय-आधार नहीं हो सकता है क्योंकि या तो वह बहुत अधिक विस्तृत होता है या अत्यधिक संकीर्ण।[4] अतः निर्णय के किसी विशिष्ट भाग को उद्धृत करके उसे विनिश्चय-आधार कहना अनुचित होगा। गुडहार्ट के विचार से न्यायाधीशों द्वारा किसी मामले के तथ्यों के आधार पर निकाला गया निष्कर्ष (conclusion) ही उस वाद का विनिश्चय-आधार होता है। उनका कहना है कि किसी पूर्ववर्ती निर्णय का निर्णयाधार ही न्यायाधीशों द्वारा पश्चात्वर्ती निर्णयों में लागू किया जाना चाहिये। यही न्यायिक विनिश्चय जो पश्चात्वर्ती वादों में निर्णय का आधार होता है, भविष्य के लिए विधि की शक्ति रखता है।

3. विनिश्चय-आधार (*Ratio decidendi*) के उदाहरण के रूप में **ब्रिजेश** बनाम **हाक्सवर्थ**[5] के वाद को उद्धृत किया जा सकता है। इस वाद में यह निर्णीत किया गया कि किसी दुकान की फर्श पर पड़े हुए सिक्के

पर यदि वहाँ आने वाले किसी ग्राहक की दृष्टि पड़ती है और वह उसे सर्वप्रथम पा लेता है, तो उस सिक्के पर दुकानदार की बजाय ग्राहक का ही कब्जा-अधिकार होगा। यह निर्णय ईंग्लिश विधि के सुस्थापित सिद्धान्त 'फाइन्डर्स-कीपर्स' (finders-keepers) पर आधारित था और यही इस वाद का निर्णयाधार (ratio decidendi) माना जाएगा।

बेन्थम (Bentham) ने पूर्व-निर्णय को 'न्यायाधीशों द्वारा निर्मित नियम' (Judge-made law) कहा है जबकि ऑस्टिन (Austin) इस प्रकार के नियमों को 'न्यायपालिका की विधि' (judiciary's law) मानते हैं।[6]

पूर्व-निर्णयों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए ब्लैकस्टोन (Blackstone) ने कहा है कि पूर्ववर्ती निर्णयों के प्रयोग द्वारा न्याय की तराजू सन्तुलित तथा स्थिर बनी रहती है। नये न्यायाधीशों की नियुक्ति के साथ विधि में एकाएक नवीन परिवर्तन नहीं लाये जा सकते हैं। जो बातें पहले अनिश्चित रही हैं, वे न्यायिक पूर्व-निर्णयों के द्वारा विनिश्चित हो जाती हैं।[7] ब्लैकस्टोन के इस तर्क का समर्थन अमेरिकी विधिशास्त्री डॉ० कार्टर ने भी किया है।[8]

कीटन के अनुसार न्यायिक पूर्व-निर्णय न्यायालय द्वारा दिये गये ऐसे न्यायिक विनिश्चय हैं जिन्हें किसी प्रकरण में निर्णय देने के लिए आधार बनाया जाता है। इसीलिए इन्हें 'निर्णयाधार' कहा गया है।

विख्यात अमरीकी न्यायविद् बेन्जामिन कारडोजो (Benjamin Cardozo) ने भी न्यायालयीन पूर्व-निर्णय को विधि के स्रोत के रूप में स्वीकार किया है किन्तु वे इसका कट्टरता से पालन किये जाने के पक्ष में नहीं हैं क्योंकि न्यायपीठों (Benches) में निरन्तर परिवर्तन होते रहने के कारण उनके द्वारा दिये गये निर्णयों को बंधनकारी प्रभाव देना अनेक व्यावहारिक कठिनाइयाँ उत्पन्न कर सकता है।

बिर्च बनाम **ब्राउन**[9] के वाद में लार्ड मैकमिलन ने पूर्व-निर्णय या पूर्वोक्ति के विषय में अभिकथन किया कि इन्हें न्याय-प्रवेश के मार्ग के रूप में अपनाया जाना चाहिये न कि अन्तिम विश्राम स्थल की तरह।[10] आशय यह है कि किसी मुकदमे के निर्णय तक पहुँचने के लिए न्यायाधीश पूर्व निर्णय का आधार ले सकते हैं किन्तु उन्हें विवादग्रस्त मामले में अन्तर्निहित तकनीकी बारीकियों को नजरंदाज नहीं करना चाहिये। कुछ विद्वानों ने पूर्व-निर्णय की तुलना मदिरा से की है और कहा है कि जिस प्रकार समय के साथ मदिरा एक विशिष्ट बिन्दु तक उत्कृष्ट होती है परन्तु तत्पश्चात् उसका बिगड़ना प्रारम्भ हो जाता है, उसी प्रकार पूर्वोक्तियाँ एक निश्चित सीमा के बाहर अपना महत्व खो देती हैं।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि पूर्व-निर्णय एक ऐसा निर्देश है जो भावी निर्णय का आधार हो सकता है। यह एक उपाय है जिसका निरन्तर उपयोग किया जाता है और जो विधि में व्यापक रूप से प्रयुक्त होता है। उल्लेखनीय है कि पूर्व-निर्णय का प्रवर्तन न्यायिक विनिश्चयों की शुद्धता की विधिक धारणा पर आधारित है। एक बार विनिश्चित मामला सदैव के लिए विनिश्चित माना जाता है। किसी निर्णय में जो बात कही जाती है वह स्थापित सच्चाई होती है। जब तक किसी उच्चतर न्यायालय द्वारा किसी विनिश्चय को पलट नहीं दिया जाता, तब तक पूर्व-निर्णय को चुनौती नहीं दी जा सकती है। यदि इसके विषय में कोई आपत्ति हो, तो उच्चतर न्यायालय में अपील दायर करके उसे विनिश्चित कराया जा सकता है।

निर्णयानुसरण का सिद्धान्त (Doctrine of *Stare Decisis*)

निर्णयानुसरण का सिद्धान्त इंग्लिश विधि का एक सर्वमान्य सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार पूर्व निर्णय प्राधिकारपूर्ण (authoritative) तथा बन्धनकारी (binding) होते हैं तथा इनका अनुसरण किया जा

अनिवार्य है। जब अनेक निर्णयों द्वारा किसी वैधानिक प्रश्न को स्पष्टतया सुनिश्चित कर दिया जाता है, तो उसका अनुसरण करने तथा उसे न बदलने के सिद्धान्त को निर्णयानुसरण का सिद्धान्त (Doctrine of *Stare Decisis*) कहते हैं। इंग्लैण्ड के न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णय समान तथ्यों वाले मामलों में ब्रिटेन के न्यायालयों पर बन्धनकारी (binding) होते हैं। इसीलिए वहाँ न्यायिक पूर्व-निर्णयों को विधि के तात्विक स्रोत के रूप में मान्यता प्राप्त है। निर्णयानुसरण के लिए दो बातें आवश्यक हैं—

(1) प्रथम यह कि निर्णीत वादों की रिपोर्टिंग (Law Reporting) की समुचित व्यवस्था होनी चाहिये;

तथा

(2) द्वितीय यह कि श्रेणीबद्ध न्यायालयों की निश्चित शृंखला (Hierarchy of Courts) होनी चाहिये।

1. निर्णयों का प्रकाशन

इंग्लैण्ड का कॉमन लॉ अथवा वहाँ की अलिखित प्राचीन विधि प्रायः पूर्ण रूप से विनिश्चित मामलों की ही उत्पत्ति है। ऐसे विनिश्चित मामले लॉ रिपोर्ट्स में संकलित किये जाते हैं और ये निचली अदालतों के लिए बन्धनकारी प्रभाव रखते हैं। इंग्लैण्ड में न्यायिक पूर्व-निर्णयों को अत्यधिक महत्वपूर्ण माना गया है। ये केवल विधि का साक्ष्य ही नहीं बल्कि विधि के स्रोत भी हैं। पूर्व-निर्णयों द्वारा स्थापित विधि का अनुसरण सभी अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा किया जाना अनिवार्य है।

अनेक विद्वानों का मत है कि इंग्लैण्ड में निर्णयानुसरण का सिद्धान्त वस्तुतः विधि-निर्णय पत्रिकाओं के प्रकाशन (Law Reporting) का इतिहास है।[11] पन्द्रहवीं शताब्दी तक इंग्लैण्ड में विधि-निर्णयों को प्रकाशित कराने की परिपाटी प्रारम्भ नहीं हुई थी तथापि ब्रैक्टन (Bracton) ने अपनी 'नोट बुक' नामक कृति में लगभग दो हजार विनिश्चयों को संकलित किया तथा इनमें से लगभग पाँच सौ का प्रयोग उन्होंने अपने ग्रन्थ 'ट्रिटाइस' (Treatise) में किया। फिर भी उस समय तक निर्णयानुसरण को बन्धनकारी नहीं माना गया था।[12] ब्रैक्टन द्वारा पूर्व-निर्णयों का संकलन इस प्रयोजन से किया गया था कि न्यायाधीश अपने निर्णय की पुष्टि में पूर्ववर्ती विनिश्चित समान वादों का सन्दर्भ दे सकें।

इंग्लैण्ड में "वार्षिक विधि-निर्णय-पत्रिका" (Year Book) के प्रकाशन ने निर्णयानुसरण के सिद्धान्त (Doctrine of *Stare Decisis*) के विकास में नई गति ला दी। इसे इंग्लिश विधि-निर्णय-पत्रिका की प्रारम्भिक अवस्था कहा जा सकता है तथापि यह वर्तमान लॉ-रिपोर्टिंग से भिन्न थी। वार्षिक निर्णय-पत्रिकाओं का उपयोग विधि के अध्ययन के लिए आवश्यक समझा जाता था। न्यायाधीश भी किसी पूर्व-निर्णीत वाद का हवाला दे सकते थे, परन्तु वे उस निर्णय का अनुसरण करने के लिए बाध्य नहीं थे।

सोलहवीं शताब्दी में अनेक निजी प्रकाशकों ने विधि-निर्णयों को प्रकाशित कराया जिनमें डायर (Dyer) का नाम विशेष उल्लेखनीय है जिन्होंने 1513 से 1582 ई० के मध्य अनेक निर्णय-पत्रिकाएँ प्रकाशित कराईं। इसी प्रकार प्लोडन, कोक (1616) आदि के रिपोर्ट्स का प्रकाशन भी हुआ। सन् 1636 में **गोडन** बनाम **हेल्स**[13] के वाद में मुख्य न्यायाधीश हरबर्ट ने विनिश्चित किया कि "किसी वाद में एक्सचेकर न्यायालय द्वारा एक निश्चित विधि का नियम प्रतिपादित हो जाने के पश्चात् वह निर्णय भविष्य में आने वाले समान वादों में, बन्धनकारी प्रभाव रखेगा तथा इस न्यायालय के न्यायाधीश इस सम्बन्ध में विवाद प्रस्तुत नहीं कर सकते।" परन्तु प्रारम्भ में यह सिद्धान्त केवल एक्सचेकर न्यायालय के लिए ही लागू किया गया था। सम्राटीय न्यायालय (King's Bench) या कॉमन प्लीज न्यायालय (Courts of Common Pleas) में इसे प्रयुक्त नहीं किया जाता था। इस सिद्धान्त को लार्ड्स सदन (House of Lords) के विनिश्चयों के प्रति भी लागू नहीं किया गया था।

न्यायाधीश कोक (Coke) के पश्चात् लगभग डेढ़ सौ वर्षों तक इंग्लैण्ड में उत्कृष्ट निर्णय प्रकाशन का अभाव रहा। अठारहवीं शताब्दी में बरो (Burrow) ने अपनी लॉ-रिपोर्ट्स में सन् 1757 से 1771 तक के निर्णीत वादों को प्रकाशित कराया। इस समय तक पूर्ववर्ती वादों में विनिश्चित विधि के नियमों को भविष्य में निर्णय हेतु आने वाले वादों के प्रति लागू करने की पद्धति पूर्णतः स्थापित हो चुकी थी तथा निर्णयानुसरण के सिद्धान्त (*Ratio Decedendi*) के बन्धनकारी स्वरूप को मान्यता प्राप्त हो चुकी थी।

सन् 1833 में न्यायमूर्ति पार्क (Justice Park) ने **मायरहाउस** बनाम **रेनर**[14] के ऐतिहासिक विनिश्चय में पूर्व-निर्णयों के बंधनकारी प्रभाव के सिद्धांत को सभी अधीनस्थ न्यायालयों के प्रति लागू किये जाने की आवश्यकता पर जोर दिया। इसके फलस्वरूप सन् 1873 के ज्यूडीकेचर एक्ट के अन्तर्गत सुप्रीम कोर्ट ऑफ ज्यूडीकेचर की स्थापना के साथ इंग्लिश न्यायालयों में पूर्व-निर्णय का सिद्धांत पूर्णतः स्थापित हो गया। इस सिद्धांत के अनुसार जब किसी न्यायालयीन-निर्णय में विधि का कोई नया सिद्धांत प्रतिपादित किया गया हो, तो वह सभी अधीनस्थ न्यायालयों के लिए बंधनकारी प्रभाव रखेगा तथा समकक्ष न्यायालयों (Equivalent Courts) के लिए उसका अनुनयी (persuasive) प्रभाव होगा।

सन् 1865 में इन्कारपोरेटेड काउन्सिल ऑफ लॉ रिपोर्टिंग द्वारा इंग्लैण्ड के विधि-निर्णयों का प्रकाशन अपने हाथ में लिए जाने के बाद पूर्व-निर्णयों के प्रयोग को अधिकाधिक सफलता प्राप्त हुई। कालान्तर में सन् 1936 में ऑल इंग्लैण्ड लॉ रिपोर्ट्स का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इसी प्रकार सन् 1953 से काउन्सिल ऑफ लॉ रिपोर्टिंग द्वारा वीकली लॉ रिपोर्ट्स (Weekly Law Reports) शीर्षक से एक नया न्याय-निर्णय प्रकाशन प्रारम्भ किया गया।

2. श्रेणीबद्ध न्यायालयों की शृंखला (Hierarchy of Courts)

पूर्व-निर्णयों के प्राधिकारिक तथा बन्धनकारी प्रभाव के लिए निर्णयों के प्रकाशन के अतिरिक्त सुनिश्चित श्रेणीबद्ध न्यायालयों की शृंखला (Hierarchy of Courts) का होना भी नितांत आवश्यक है। इंग्लैण्ड में शृंखलाबद्ध न्यायालयों की स्थापना सन् 1873-75 के ज्यूडीकेचर एक्ट के अन्तर्गत हुई जब विभिन्न प्रकार के न्यायालयों को क्रमबद्ध शृंखला में वर्गीकृत किया गया। न्यायालयों की इस क्रमबद्ध शृंखला में हाउस ऑफ लार्ड्स को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है तथा कोर्ट ऑफ अपील हाउस ऑफ लार्ड्स से निचले परन्तु हाईकोर्ट से उच्चतर श्रेणी के न्यायालय हैं। **गेली** बनाम **ली**[15] के वाद में लार्ड डेनिंग (Lord Denning M.R.) ने अभिकथन किया कि कोर्ट ऑफ अपील स्वयं के पूर्व-निर्णयों से बाध्य नहीं है। क्योंकि हाउस ऑफ लार्ड्स ने भी स्वयं पर से यह बंधन हटा लिया है।

सन् 1966 तक इंग्लैण्ड का हाउस ऑफ लार्ड्स भी स्वयं के निर्णय से बाध्य था।[16] परन्तु 26 जुलाई, 1966 को इस न्यायालय ने यह घोषणा की कि भविष्य में वह स्वयं के निर्णयों से सदैव बाध्य नहीं रहेगा क्योंकि पूर्व-निर्णय के सिद्धान्त का कठोरता से पालन करने के परिणामस्वरूप वाद-विशेष में पक्षकारों के प्रति घोर अन्याय हो सकता है और विधि की प्रगति अवरुद्ध होने की सम्भावना रहती है। हाउस ऑफ लार्ड्स ने यह स्पष्ट किया कि स्वयं के निर्णय से बाध्य न रहने का निर्णय केवल हाउस ऑफ लार्ड्स तक ही सीमित रहेगा तथा अन्य न्यायालयों के लिए पूर्व-निर्णय का प्रभाव यथावत् बना रहेगा।[17] एक हाईकोर्ट का निर्णय अन्य हाई कोर्टों पर बन्धनकारी प्रभाव नहीं रखता क्योंकि स्तर की दृष्टि से वे सभी समकक्ष हैं। अतः कोई हाईकोर्ट यदि चाहे तो, किसी अन्य हाईकोर्ट द्वारा दिये गये निर्णय का अनुसरण कर सकता है या अनुसरण करने से इन्कार भी कर सकता है।

निर्णयानुसरण (*Stare Decisis*) के सिद्धान्त के अनुसार हाईकोर्ट के एक न्यायाधीश (Single Judge) के निर्णय की बजाय खण्डपीठ (Division Bench) द्वारा दिया गया निर्णय अधिक महत्वपूर्ण होता है।